की प्राप्ति दिव्य स्रोतों से होती है। सर्वप्रथम स्वयं श्रीभगवान् ने इसका प्रवचन किया था। श्रीभगवान् की वाणी साधारण मनुष्यों के समान नहीं है। साधारण मनुष्य भ्रम, प्रमाद, विप्रलिप्सा (शठता) और करणापाटव (इन्द्रियों की अपूर्णता)—इन चार विकारों से दूषित रहते हैं। जिसमें ये चार दोष हों, वह तत्त्वज्ञान को शुद्ध रूप में प्रदान नहीं कर सकता।

वैदिक ज्ञान का प्रसार इस कोटि के दोषपूर्ण जीवों के द्वारा नहीं किया जाता। उसका संचार सर्वप्रथम आदिजीव ब्रह्मा के हृदय में किया गया था। ब्रह्माजी ने भगवान् से प्राप्त हुए इसी ज्ञान को शुद्ध रूप में अपने पुत्रों और शिष्यों में प्रचारित किया। श्रीभगवान् पूर्ण हैं; वे मायावश नहीं हो सकते। अतएव बुद्धिमानी से यह जान लेना चाहिए कि वे ब्रह्माण्ड की प्रत्येक वस्तु के एकमात्र स्वामी हैं और वे ही आदि स्रष्टा हैं, अर्थात् ब्रह्मा तक के जन्मदाता हैं। इसी से ग्यारहवें अध्याय में श्रीभगवान् को 'प्रपितामह' कहा गया है, क्योंकि ब्रह्मा जी को 'पितामह' कहा जाता है और श्रीकृष्ण उनके पिता हैं। अतएव किसी भी वस्तु पर अपना अधिकार न समझे; उन्हीं वस्तुओं को स्वीकार करे, जो जीवन धारण के लिये श्रीभगवान् द्वारा नियत हैं।

श्रीभगवान् के द्वारा हमारे लिये नियत की गई वस्तुओं का सदुपयोग हम किस विधि से करें, इसके अनेक दृष्टान्त दिये जाते हैं। भगवद्गीता में भी इसका वर्णन है। अर्जुन ने प्रारम्भ में यह निश्चय किया था कि वह कुरुक्षेत्र के युद्ध में नहीं लड़ेगा। यह उसका अपना निर्णय था। एक बार तो उसने श्रीकृष्ण से स्पष्ट कह ही दिया कि स्वजनों का वध करने से प्राप्त राज्य को भोगना उसके लिए सम्भव नहीं है। अर्जुन का यह निर्णय देहात्मबुद्धि पर आधारित था, क्योंकि वह समझ रहा था कि वह स्वयं देह है और भाई, भतीजे, साले, पितामह आदि देह के सम्बन्धी उसके बन्धु हैं। शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ही वह इस प्रकार विचार कर रहा था। भगवद्गीता का प्रवचन इसी दृष्टिकोण को बदलने के लिए किया गया और अन्त में अर्जुन ने श्रीभगवान् के मार्गदर्शन में लड़ने का ही निश्चय किया। उसने कहा है, **करिष्ये वचनं तव**, 'मैं आपके वचनों का पालन करूँगा।'

मनुष्य इस संसार में शूकर के समान परिश्रम करने के लिए उत्पन्न नहीं हुआ है। यह परम आवश्यक है कि इस मनुष्य योनि की महत्ता को जानकर वह पशु के समान निकृष्ट आचरण करना छोड़ दे। सम्पूर्ण वैदिकशास्त्रों में यह निर्देश है और इसी उपदेश का सार भगवद्गीता में निभृत है। वैदिक शास्त्र मनुष्य के लिए हैं, पशुओं के लिए नहीं। पशु पशु का वध कर देने पर भी पाप का भागी नहीं होता। किन्तु यदि मनुष्य अपनी असंयमित रसना की तृप्ति के लिए किसी पशु की हत्या करे तो उसे प्राकृतिक नियम को तोड़ने का पाप अवश्य लगेगा। भगवद्गीता में स्पष्ट रूप से उल्लेख है कि प्रकृति के गुणों के अनुसार कर्म सात्त्विक, राजस और तामस—ये तीन प्रकार के होते हैं। आहार के भी सत्त्व, रज और तम—ये तीन भेद हैं। यह सब विशद रूप से वर्णन किया गया है, इसलिए यदि भगवद्गीता की शिक्षा का पर्याप्त